बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 224

विदेशी ऋण के जोखिम

वित्तीय क्षेत्र में व्याप्त तनाव और बैंकिंग क्षेत्र में फंसे हुए कर्ज का बढ़ता स्तर, भारतीय कंपनियों को विदेशों से ऋण लेने के लिए मजबूर कर रहे हैं। बिज़नेस स्टैंडर्ड के रिसर्च ब्यूरो द्वारा जुटाए गए आंकड़े बताते हैं कि वर्ष 2019 के पहले 10 महीनों में डॉलर बॉन्ड के जरिये 13.74 अरब डॉलर की राशि जुटाई गई जबकि पिछले वर्ष समान अवधि में यह राशि 1.65 अरब डॉलर थी। यह भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा प्रकाशित आंकड़ों के अनुरूप ही है। ताजा मौद्रिक नीति रिपोर्ट के अनुसार वाणिज्यिक क्षेत्र को मिलने वाला फंड अप्रैल से सितंबर के मध्य तक घटकर 90,995 करोड़ रुपये रह गया जबकि गत वर्ष समान अवधि में यह 7.36 लाख करोड़ रुपये था। चूंकि बैंकिंग व्यवस्था से फंड की आवक नहीं हो रही है इसलिए कंपनियों ने विदेशी स्रोतों का रुख किया। इस अवधि में बाहरी स्रोतों से 54,073 करोड़ रुपये की उधारी ली गई जबकि पिछले वर्ष समान अवधि में यह राशि (-) 653 करोड़ रुपये थी। वाणिज्यिक क्षेत्र को इस अवधि में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश में सुधार का लाभ भी मिला।

बैंकिंग क्षेत्र कमजोर बैलेंस शीट के चलते ऋण देने का इच्छुक नहीं है। कंपनियां भी कम दरों का लाभ लेने के लिए विदेशों से ऋण लेना पसंद कर रही हैं। ऐसे में बेहतर रेटिंग वाली कंपनियों के लिए अंतरराष्ट्रीय बाजार से धन जुटाना कोई मुश्किल नहीं है। वह भी ऐसे समय में जबकि विकसित अर्थव्यवस्थाओं के निवेशक बेसब्री से प्रतिफल की बाट जोह रहे हैं। बहरहाल, विदेशी मुद्रा में की गई उधारी पर अधिक निर्भरता वित्तीय स्थिरता के लिए जोखिम पैदा कर सकती है। देश का बाहरी वाणिज्यिक ऋण 200 अरब डॉलर से अधिक है। इसके अलावा अल्पावधि का ऋण विदेशी मुद्रा भंडार के 56 फीसदी के बराबर है। वैश्विक बाजार में तनाव बढ़ने पर अल्पावधि के ऋण का बढ़ा हुआ स्तर घरेलू बाजारों में अस्थिरता ला सकता है। तेल कीमतों में अचानक उछाल आने से मौजूदा बाजार में अस्थिरता आ सकती है क्योंकि तेल भुगतान बकाया है। 2018 में ऐसा हो चुका है। रुपये के अधिमूल्यन से उन कंपनियों पर कर का बोझ बढ़े जिन्होंने बिना विदेशी मुद्रा राजस्व के विदेशी मुद्रा में ऋण लिया। विदेशों से ज्यादा ऋण लेने से रुपये पर दबाव बढ़ सकता है। बीते कई वर्षों से देश का निर्यात ठहरा हुआ है और रुपये के अधिमूल्यन को इसकी एक बड़ी वजह माना जाता है। चूंकि देश चालू खाते के घाटे का शिकार है इसलिए उसे बचत-निवेश के अंतराल की भरपाई के लिए पूंजी की आवश्यकता होगी। ऐसे में अगर विदेशी मुद्रा में अल्पावधि का ऋण नहीं लिया जाए तो बेहतर होगा। यदि केंद्रीय बैंक रुपये को प्रतिस्पर्धी बनाने के लिए सक्रिय हस्तक्षेप करें तो बेहतर होगा।

इतना ही नहीं देश की वित्तीय व्यवस्था को मजबूत बनाना भी आवश्यक है ताकि बचत को प्रभावी तरीके से अर्थव्यवस्था के उत्पादक क्षेत्रों तक पहुंचाया जा सके। हालांकि सरकार सरकारी बैंकों को सुदृढ़ कर रही है और उनमें नई पूंजी डाल रही है लेकिन उन्हें पटरी पर लाने के लिए काफी कुछ करने की आवश्यकता है। सरकार और आरबीआई को गैर बैंकिंग वित्तीय क्षेत्रों से जुड़ी चिंताओं को समाप्त करना होगा। वित्तीय क्षेत्र पर दबाव, मौद्रिक नीति के पारेषण पर असर डाल रहा है और देश के कारोबारी जगत को कम दरों का उचित लाभ नहीं मिल पा रहा है। बैंकों की औसत ऋण दर और नीतिगत रीपो दर के बीच का अंतर अभी उच्चतम स्तर पर बताया जा रहा है। अर्थव्यवस्था के उत्पादक क्षेत्रों को फंड मुहैया कराने के लिए हमें मजबूत वित्तीय तंत्र की आवश्यकता है। इससे विदेशी ऋण पर निर्भरता कम करने और वित्तीय स्थिरता मजबूत करने में मदद मिलेगी।

बिनय सिन्हा

मोदी और चिनफिंग के पास है अवसर

पांच शिखर बैठकों का पहला नतीजा, दोनों देशों के कद्दावर नेताओं के बीच आपसी मान-सम्मान में चरणबद्ध इजाफे के रूप में सामने आ सकता है। विस्तार से जानकारी दे रहे हैं **तरुण दास**

भारत और चीन के रिश्तों के भविष्य पर दृष्टि डालने पर क्या नजर आता है? प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और चीन के राष्ट्रपति शी चिनफिंग के बीच पांच शिखर वार्ताओं को नजर में रखते हुए सन 2022 पर नजर डालना बेहतर होगा। इनमें से दो शिखर बैठक हो चुकी हैं जबकि तीन बैठकें क्रमश: 2020, 2021 और 2022 में होनी हैं। पांच वर्ष की अवधि किसी भी तरह की प्रगति या इसके उलट हालात को आंकने की दृष्टि से उचित हैं।

इन पांच शिखर बैठकों का पहला नतीजा दोनों मजबूत नेताओं के बीच बढ़ते आपसी सम्मान के रूप में सामने आता है। ये दोनों नेता न केवल अपने व्यक्तित्व में मजबूत हैं बल्कि उनके कदम भी मजबूती भरे हैं। उनके बीच मतभेद होने पर भी आपसी सम्मान द्विपक्षीय रिश्तों के लिए बेहतर ही रहता है। दिक्कतों की कमी नहीं है और चुनौतियां तो उससे भी कई गुना ज्यादा हैं। पांच अनौपचारिक बैठकों में काफी समय साथ बिताने के बाद और अन्य बैठकों में कई मुलाकातों के बाद आपसी सम्मान की अपेक्षा होना स्वाभाविक है। यदि ऐसा होता है तो 2022 तक काफी बेहतरी आ सकती है।

इस आपसी मान-सम्मान से आगे बढ़ें तो दूसरा नतीजा हो आपसी विश्वास में कदम दर कदम इजाफा। यह दोनों देशों के लिए एक बड़ी प्रगति होगी क्योंकि दोनों देश आधी सदी से आपसी विश्वास की कमी से जूझ रहे हैं। भरोसे की यह कमी दोनों ओर से है। भरोसा कायम करने में कई छोटे-छोटे कदम लगते हैं लेकिन एक गलत कदम से यह भरोसा टूट जाता है। तमाम तरह की चुनौतियों के बावजूद पांच अनौपचारिक शिखर बैठकों के कारण आपसी भरोसे में सुधार तो होना चाहिए। सन 2022 तक इतनी अपेक्षा तो की ही जा सकती है।

तीसरा नतीजा हो सकता है व्यापार को लेकर आपसी समझ में सुधार। भारत का व्यापार घाटा करीब 60 अरब डॉलर से अधिक है। व्यापार घाटे को धीरे-धीरे कम करके 25 अरब डॉलर तक लाया जा सकता है। यह स्तर अपेक्षाकृत बेहतर माना जा सकता है। लेकिन इसके उलट यह बढ़कर 70 अरब डॉलर भी हो सकता है। यह न केवल दोनों सरकारों पर बल्कि दोनों देशों के कारोबार और उद्योग जगत पर भी निर्भर करता है। दोनों देशों की सरकारों खासकर चीन द्वारा द्वारा तय माहौल में ही निर्यातक और आयातक काम करते हैं। द्विपक्षीय व्यापार पर वास्तविक प्रगति हकीकत में तब्दील हो सकती है। इसे दोनों देशों के नेता और उद्योग गति प्रदान कर सकते हैं लेकिन यह काफी हद तक चीन पर निर्भर करेगा।

यदि चीन अपने अपेक्षाकृत छोटे पड़ोसियों के साथ तार्किकता से पेश आता है तो सन 2022 तक क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक साझेदारी समझौते (आरसेप) में भी उल्लेखनीय प्रगति देखने को मिलेगी। इन सारे देशों की अर्थव्यवस्था का आकार चीन की तुलना में काफी छोटा है। भारत भी इनमें शामिल है। जाहिर है चीन की भूमिका बड़ी होगी और आवश्यक यह होगा कि वह इन देशों को दबाने के बजाय इनका सहयोग करे। अच्छा होगा कि वह भय उत्पन्न करने के बजाय मित्र बनाए। वर्ष 2022 तक चौथी बात यह हो सकती है कि आतंकवाद को लेकर दोनों देश व्यावहारिक सहयोग करें। चीन की अन्य प्रतिबद्धताओं के बावजूद इस दिशा में खाका खींचने में मदद मिलेगी क्योंकि भारत तथा शेष विश्व की तरह उसके लिए भी आतंकवाद गंभीर चिंता का विषय है। चीन यह समझता है कि आतंकवाद कितना नुकसान पहुंचा सकता है। आतंकवाद संक्रामक है। सन 2022 तक भारत और चीन शायद कुछ साझा चिंताओं पर साथ मिलकर काम करें।

पांचवां नतीजा एक अलग क्षेत्र से सहयोग के रूप में सामने आ सकता है। यह दो तरफा निवेश के रूप में सामने आ सकता है लेकिन भारत के विनिर्माण उद्योग को इसका विशेष लाभ मिल सकता है। जब तक भरोसे में कमी है, नीति और प्रक्रियाएं निवेश को बाधित करेंगे। यह परिदृश्य बदलने पर द्विपक्षीय निवेश का माहौल भी बदलेगा। दोनों देशों में उनके उद्योग विनिर्माण इकाइयां स्थापित कर सकते हैं, रोजगार तैयार कर सकते हैं और तकनीकी विकास कर सकते हैं। यदि विश्वास निर्माण की प्रक्रिया और एक दूसरे के प्रति खुलापन लाने की प्रक्रिया में इजाफा होता है तो सन 2022 की तस्वीर बदली हुई नजर आ सकती है।

छठा नतीजा अहम होगा: रक्षा, सैन्य और सुरक्षा सहयोग की शुरुआत। विश्वास के बिना इस क्षेत्र में दिक्कत हो सकती है। सामरिक सहयोग और साझा सामरिक हितों में इनकी अहम भूमिका है। उपरोक्त शिखर बैठकें इस दिशा में अहम शुरुआत करेंगी।

सातवां नतीजा जनता से जनता का संपर्क बढ़ाने से संबद्ध है। खासतौर पर शिक्षा, प्रशिक्षण और पर्यटन के क्षेत्र में। वीजा जारी होने या न होने का संबंध द्विपक्षीय तनाव और मतभेदों से है। इस बात की पूरी संभावना है कि वर्ष 2022 तक दोनों देशों के लोगों के आपसी संवाद में सुधार होगा, लोग एक दूसरे की भाषा सीखेंगे। दोनों देशों के छात्र ज्यादा तादाद में एक दूसरे के यहां जाएंगे। अन्य नतीजे भी होंगे लेकिन हर मोर्चे पर कड़ी वार्ता के बाद ही आगे की राह निकलेगी। यह इससे पहले के सिद्धांतों से अलग है जहां कहा जाता था कि भारत को चीन के प्रति अपनी समझ बढ़ानी चाहिए। मौजूदा रुख अलग है। यह आत्मसम्मान, आत्मगौरव, आत्मविश्वास आदि से संबंधित है। हर कदम कठिन होगा लेकिन दोनों देशों की साथ प्रगति के परिदृश्य में ऐसे कदम उठाने होंगे। इस दिशा में कोई भी प्रगति चरणबद्ध तरीके से ही होगी। इसमें कोई रूमानियत या भावुकता नहीं होगी लेकिन लक्ष्य यही होगा कि चीन और भारत के बीच गहरे और व्यापक रिश्ते कायम किए जाएं।

ऐसे भी क्षेत्र होंगे जहां कोई प्रगति नहीं होगी। परंतु दोनों नेताओं का परस्पर सहयोग न केवल द्विपक्षीय रिश्तों में बल्कि तमाम एशिया और संपूर्ण विश्व में अंतर पैदा करेगा। मोदी और शी चिनफिंग के पास यह अवसर है कि वे सही दिशा में आगे बढ़कर भरोसा न करने वालों को गलत साबित कर सकें।

(लेखक सीआईआई के मुख्य कार्याधिकारी, महा निदेशक और मुख्य सलाहकार रहे हैं)

भारत ने आरसेप से अंतिम समय में क्यों बनाई दूरी

दिल्ली डायरी

ए के भट्टाचार्य

यह बहुत चौंकाने वाली बात थी कि नरेंद्र मोदी के नेतृत्व वाली केंद्र सरकार ने सोमवार को क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक साझेदारी (आरसेप) व्यापार समझौते में शामिल नहीं होने का निर्णय लिया। प्रधानमंत्री आरसेप की तीसरी बैठक में हिस्सा लेने के लिए बैंकॉक में मौजूद थे और ऐसा लग रहा था कि भारत इसमें शामिल होगा। परंतु अंतिम समय में भारत ने यह कहते हुए इससे दूरी बना ली कि इस नए कारोबारी समझौते की शर्तें भारत के राष्ट्रीय हितों के खिलाफ हैं। आखिर अंतिम क्षणों में ऐसा क्या हुआ?

16 देशों की सदस्यता वाले आरसेप को दुनिया के सबसे बड़े कारोबारी समूह के रूप में परिकल्पित किया गया था। इसमें आसियान के 10 देश तथा उनके साथ मुक्त व्यापार समझौते वाले छह देश शामिल होने थे, यानी 300 करोड़ लोग। यह पूरी दुनिया की आबादी का 45 प्रतिशत था। इन देशों का सकल घरेलू उत्पाद करीब 21.3 लाख करोड़ डॉलर और विश्व व्यापार में इनकी हिस्सेदारी 40 फीसदी है। भारत के बाहर होने के बाद इस समूह की क्षमता में कमी आएगी लेकिन इसके बावजूद यह दुनिया का सबसे बड़ा कारोबारी समूह बना रहेगा।

भारत के इस निर्णय पर अचंभा स्वाभाविक है। इस सप्ताह के आरंभ में आरसेप शिखर बैठक से पहले सरकार तथा विभिन्न अंशधारक जिनमें औद्योगिक संगठन तथा सत्ताधारी भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के धड़े शामिल थे, उनकी यही राय निकल रही थी कि भारत के लिए इस विशाल कारोबारी समूह से बाहर रहने के बजाय भीतर रहना बेहतर होगा। कहा गया कि भीतर रहने से सरकार के पास यह अवसर होगा कि वह नियमों के बनते वक्त अपने हितों के मुताबिक उनमें संशोधन कराए। इतना ही नहीं आरसेप में शामिल कई देशों ने भी भारत को यह संकेत दिया कि उन्हें भारत का भीतर रहना पसंद आएगा क्योंकि वह चीन जैसे रसूखदार देश को नियंत्रित रखने में मदद करेगा।

देश का व्यापार बढ़ाने को लेकर सरकार द्वारा नियुक्त उच्चस्तरीय सलाहकार समूह ने अपनी रिपोर्ट में कहा है कि देश के आरसेप में शामिल होने के कई लाभ हैं। यह रिपोर्ट बमुश्किल 10 दिन पहले दी गई है। रिपोर्ट जारी करने के कार्यक्रम में वाणिज्य मंत्री पीयूष गोयल ने कहा कि दस्तावेज गीता, बाइबिल या कुरान जैसा है। अचानक ऐसा क्या हुआ कि आरसेप पर देश का रुख एकदम बदल गया।

मोदी के बैठक में शामिल होने का इस अचानक लिए गए निर्णय से सीधा संबंध है। ऐसा कम ही होता है कि कोई शासनाध्यक्ष किसी शिखर बैठक में शामिल हो या अंतिम समय में उससे नाम वापस ले। मोदी ने सोमवार को जो किया उसकी तुलना अमेरिकी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप द्वारा 12 देशों के प्रशांत-पार समझौते से नाम वापस लेने से की जाएगी। परंतु इन दोनों में अंतर है। ट्रंप ने ऐसी संधि से नाता तोड़ा जिस पर उनके पूर्ववर्ती ने 2016 में हस्ताक्षर किए थे। मोदी ऐसे समझौते पर आगे बढ़ रहे थे जिसे पिछली सरकार ने शुरू किया था और इसे खारिज करने से पहले वह इस पर हस्ताक्षर करने के करीब पहुंचे थे।

परंतु अंतरराष्ट्रीय कूटनीति की दृष्टि से देखें तो मोदी का इस समझौते से बाहर निकलना उनके लिए झटका माना जाएगा। एक मजबूत नेता समझौता वार्ता में तभी शामिल होता है जब उसे लगे कि राष्ट्रीय हितों की रक्षा की जा सकती है। सवाल यह है कि मोदी जब भारत के हितों की सुरक्षा को लेकर आश्वस्त नहीं थे तो वह इस वार्ता में क्यों शामिल हुए। मोदी को इस विषय में एक भरोसेमंद वजह देनी होगी।

अभी कहा जा रहा है कि भारत आरसेप में शामिल नहीं हुआ क्योंकि सदस्य देश भारत की उस शर्त पर राजी नहीं हुए जिसमें चीन से आयात की सीमा निर्धारित करने, सेवा व्यापार बढ़ाने और भारतीय वस्तुओं और सेवाओं को चीनी बाजार में बेहतर पहुंच सुनिश्चित करने और 2019 को कृषि तथा डेरी क्षेत्र में शुल्क कटौती का आधार वर्ष बनाने की बात शामिल थी। इनमें से कोई मुद्दा नया नहीं था। भारत सरकार को उम्मीद थी कि इस दिशा में आगे बातचीत से राह निकलेगी। ऐसे में बैंकॉक में क्या हुआ जो सरकार ने समझौते में शामिल न होने का निर्णय लिया। क्या आरसेप के सदस्य देश भारत की चिंताओं को तवज्जो नहीं दे रहे थे? क्या ऐसा इसलिए था क्योंकि चीन का प्रभाव बढ़ा? क्या भारत की मोलतोल की क्षमता प्रभावित हुई क्योंकि कश्मीर के घटनाक्रम के बाद अंतरराष्ट्रीय समुदाय का रुख बदला?

इस बात में कोई दम नहीं है कि सरकार ने अपना रुख स्वदेशी जागरण मंच के भारी विरोध के बाद बदला। मंच मुक्त व्यापार का विरोधी और संरक्षणवाद का हिमायती है। यह भी सही नहीं कि किसानों और औद्योगिक नेताओं के विरोध के कारण सरकार का रुख बदला। तथ्य तो यही है कि स्वदेशी जागरण मंच ने हमेशा आरसेप का विरोध किया है। मंच की पहले अनदेखी क्यों हुई और वह अचानक महत्त्वपूर्ण क्यों हो गया? इसी तरह मोदी के बैंकॉक जाने के कुछ दिन पहले सीआईआई ने एक वक्तव्य जारी कर भारत के आरसेप में शामिल होने का समर्थन किया था। परंतु गत सोमवार को सीआईआई ने भी अपना रुख बदला और सरकार के आरसेप से हटने का समर्थन किया। संभव है कि भारत सरकार को बैंकॉक में लगा हो कि उसकी मांगें नहीं सुनी जा रही हैं और उसने अमेरिका के साथ व्यापार समझौते की दिशा में बढ़ने का निर्णय किया हो। आरसेप में शामिल होने को अमेरिका भारत के चीन के करीबी साझेदार और चीनी वस्तुओं के नए बाजार के रूप में देख सकता था। इससे चीन पर लगाए उसके प्रतिबंध कम असरदार हों। भारत के आरसेप से बाहर होने ने भारत और अमेरिका के बीच नए व्यापारिक समझौतों की राह आसान की है। यदि अमेरिका भारत के साथ जल्द व्यापार समझौता करता है और भारत चीन द्वारा भारतीय वस्तुओं की पहुंच को नकारने का प्रतिरोध करता है तो भारत के आरसेप से बाहर होने की दलील को एक नया आयाम मिलेगा।

कानाफूसी

हस्तक्षेप करेंगे राहुल गांधी

कांग्रेस के पूर्व राष्ट्रीय अध्यक्ष राहुल गांधी की अक्सर इस बात के लिए आलोचना की जाती है कि संसद में सवाल पूछने के मामले में उनका प्रदर्शन खासा निराशाजनक रहा है। शून्य काल में हस्तक्षेप को लेकर भी उन पर यही बात लागू होती है। बहरहाल राहुल इन दिनों संसद के आगामी शीतकालीन सत्र की जोरदार तैयारी में लगे हुए हैं। राहुल के करीबी सूत्रों का कहना है कि इस बार वह शून्य काल के दौरान सार्वजनिक महत्त्व के प्रश्न पूछेंगे। एक बार सत्र समाप्त हो जाने के बाद राहुल देश के विभिन्न हिस्सों की यात्राओं पर निकलेंगे। ऐसी कम से कम पांच यात्राओं का खाका तैयार किया जा रहा है। इन यात्राओं के दौरान राहुल आम लोगों से मुलाकात करेंगे। राहुल सन 2004 से ही लोकसभा सदस्य हैं। वह केरल के वायनाड संसदीय क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करते हैं।

बदलाव की विडंबना

आंध्र प्रदेश सरकार ने पहले तो एपीजे अब्दुल कलाम प्रतिभा पुरस्कार का नाम बदलकर वाईएसआर विद्या पुरस्कार किया लेकिन उसे एक दिन के भीतर ही अपना यह फैसला पलटना पड़ा। दरअसल सरकार के इस फैसले की ऑनलाइन जगत में जमकर आलोचना हुई। आलोचना करने वालों में प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री एन चंद्रबाबू नायडू भी शामिल थे। पूर्व राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम के नाम पर रखा गया यह पुरस्कार 11 नवंबर को राष्ट्रीय शिक्षा दिवस पर दिया जाता है। 11 नवंबर देश के पहले शिक्षा मंत्री मौलाना अबुल कलाम आजाद की जन्मतिथि भी है। मई में भारी बहुमत से चुनाव जीतकर सत्ता में आने वाले जगन मोहन रेड्डी को हाल के महीनों में पिछली सरकार की योजनाओं का नाम बदलकर अपने पिता के नाम पर करने के लिए काफी आलोचना का सामना करना पड़ा है। यहां तक कि उन्होंने एक ग्राम सचिवालय की इमारत को ही अपनी पार्टी के रंग में रंगवा दिया था।

आपका पक्ष

भारत का आरसेप से पीछे हटना

एशिया के 16 प्रमुख देशों के साथ सबसे बड़े व्यापारिक समझौते क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक साझेदारी (आरसेप) से भारत पीछे हट गया है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने कहा कि जब वह आरसेप समझौते को सभी भारतीयों के हितों से जोड़कर देखते हैं तो मुझे सकारात्मक जवाब नहीं मिलता है। भारत ने इस समझौते से पहले कई मुद्दे और चिंताएं सामने रखी थीं पर उनका ठोस समाधान नहीं निकल सका। भारत की पहली और सबसे बड़ी चिंता यह है कि चीन समेत इन देशों के साथ पहले से ही बड़ा व्यापार घाटा है। इस समझौते के बाद आयात और ज्यादा बढ़ने की स्थिति में भारतीय उद्योगों और किसानों के हित प्रभावित हो सकते थे। अगर भारत यह समझौता कर लेता तो समझौते के अनुसार सदस्य देशों को आयात और निर्यात पर लगने वाला कर या तो नहीं भरना पड़ता या बहुत ही कम भरना पड़ता। देश ने आजादी के बाद से ही अपनी

अर्थव्यवस्था को आत्मनिर्भर बनाने की कोशिश की है और धीरे-धीरे सुधार कर देश की अर्थव्यवस्था काफी मजबूत की है। लेकिन क्षेत्रीय असमानता के चलते देश अब भी समावेशी विकास से काफी दूर है। जब तक देश की कृषि व्यवस्था के लिए सुधार नहीं लाए जाएंगे तब तक देश में क्षेत्रीय असंतुलन मौजूद रहेगा। देश में कृषि क्षेत्र के बाद

आरसेप समझौते के बाद आयात बढ़ने से देसी उद्योग को नुकसान पहुंच सकता था

सबसे ज्यादा रोजगार मध्यम एवं लघु उद्योग देता है तथा कुल निर्यात का 40 प्रतिशत योगदान इसी क्षेत्र का है। लेकिन वर्ष 2006 में इस क्षेत्र को जो संरक्षण मिल रहा था वह हटा दिया गया। आज देश को कृषि क्षेत्र तथा माध्यम एवं लघु उद्योग को आधुनिकीकरण की आवश्यकता है। देश में शीत भंडारण की नीति अब भी ठंडे बस्ते में है जिससे किसानों के उत्पाद खराब हो जाते हैं। आरसेप से भारत का पीछे हटना किसानों एवं घरेलू उद्योगों के लिए हितकारक कदम है लेकिन इसके उत्थान के लिए नए सुधारवादी एवं परिवर्तनात्मक कदम उठाना जरूरी है।

निशांत महेश त्रिपाठी, नागपुर

पेड़ बचाने से होगा प्रदूषण कम

शहर कंक्रीट के जंगल में तब्दील होते जा रहे हैं। गांव में खेत अत्यधिक उर्वरकों के इस्तेमाल से बंजर होने के कगार पर हैं। जंगलों में पेड़ों की कटाई जारी है। आज हम सभी जल, जमीन और वायु प्रदूषण से परेशान हैं। देश की राजधानी दिल्ली तथा एनसीआर का वायु प्रदूषण हो या छत्तीसगढ़-ओडिशा का जल प्रदूषण, बात उर्वरकों के अनियंत्रित इस्तेमाल से बंजर हो रहे पंजाब खेत की हो। प्रदूषण एक ऐसा अभिशाप बन गया है जो कल-कारखानों, वैज्ञानिक साधनों का अधिक उपयोग, फ्रिज, एसी, वाहन और ऊर्जा संयंत्र आदि से निकलता है। विकास के लिए पेड़ों की अंधाधुंध कटाई, प्राकृतिक जल स्रोतों का दोहन और आबादी के निकट कारखानों का चलना आदि प्रदूषण की मुख्य वजह है। प्राकृतिक संसाधनों का दोहन रोकने के लिए हरित पंचाट, सीपीसीबी और अन्य संस्थाओं को मुखर होना पड़ेगा। जल, जमीन और हवा को प्रदूषण से बचाने के लिए बच्चों और लोगों को जागरूक करने, दो पौधे लगाने और देखभाल की जिम्मेदारी लेने, कारखाने आबादी से दूर लगाने, ऑनलाइन या ई-सेवा का इस्तेमाल और निर्माण कार्य में पर्यावरणीय मानकों को ध्यान में रखा जाना जरूरी है।

पवन कुमार मौर्य, नई दिल्ली

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।